इकाई 13 सविनय अवज्ञा (CIVIL DISOBEDIENCE) और सत्याग्रह

इकाई की रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना

13.2 सविनय–अवज्ञा की संकल्पना

13.3 सविनय–अवज्ञा संकल्पना का इतिहास

13.4 सविनय–अवज्ञा सिद्धांत और अस्तित्ववादी दर्शन

13.5 सविनय–अवज्ञा व सत्याग्रह की गाँधीवादी संकल्पना

13.6 व्यवहार में सविनय–अवज्ञा

13.7 सारांश

13.8 अभ्यास

13.1 प्रस्तावना

समसामयिक विश्व में सविनय–अवज्ञा आन्दोलन की संकल्पना राजनीतिक सत्ता संरचना म एक महत्त्वपूर्ण घटक बन चुकी है। यह आन्दोलन दुनियाभर में फैल चुका है। इसका संयुक्त राज्य अमेरिका के नागरिक–अधिकार आन्दोलनों में डॉ. मार्टिन लूथर किंग, जूनियर; फिलीपीन्स में 'पीपल्स पॉउअर' आन्दोलन, पूर्वी यूरोप में साम्यवाद की अहिंसात्मक विफलता, इत्यादि द्वारा सदृभटांत प्रतिपादन किया गया है। गाँधीजी व डॉ. मार्टिन लूथर किंग, जूनियर की सफलता का सत्याग्रह के एक संगठन–शक्ति के रूप में उभरने से बडा ही सरोकार रहा। सविनय–अवज्ञा तथा सत्याग्रह के प्रभावों की गवेषणा किए बगैर बीसवीं शती के इतिहास के बारे में चर्चा करना जन–आन्दोलन की नितान्त आधार तथा समाज–विज्ञान के अध्ययन को बदनाम करना ही होगा। सविनय–अवज्ञा तथा सत्याग्रह के गाँधीवादी तरीके ने शासन–कला की संकल्पना को एक नया आयाम दिया।

11 फरवरी, 1992 को 'टुवर्ड्ज़ ए वर्ल्ड विदाउट वॉर – गांधिज़्म एण्ड द मार्डन वर्ल्ड' पर सर्वाधिक प्रतिष्ठापूर्ण गाँधी–स्मृति व्याख्यान देते हुए, डॉ. दैसाकु इकेदा ने कहा, "चूँकि हम अभूतपूर्व युद्ध व हिंसा की इस शती के अवसान पर आ पहुँचे हैं, अपने सर्वमान्य लक्ष्य के रूप में हम एक युद्ध–मुक्त संसार की रचना के प्रयास में हैं। इस नाजुक घड़ी में हम इस महान् दार्शनिक से जो सीख सकते हैं – अवश्य सीखना चाहिए – यानी वो इंसान जिसकी आध्यात्मिक विरासत को सटीक रूप से मानवता की अमूल्य निधियों में से एक, बीसवीं शती की एक अलौकिक घटना कहा जा सकता है।"

प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था का मूल्य उद्देश्य होता है एक निरन्तर नैतिक विकास के लिए मानसिक अपेक्षाओं को पूरा करने हेतु आत्म–कार्यान्वयन की प्रक्रिया में मदद करना। सत्याग्रह की यथार्थ संकल्पना ने राजनीति की संकल्पना को एक नया अर्थ और अवस्थिति प्रदान की है। डॉ. मार्टिन लूथर किंग, जूनियर सविनय–अवज्ञा और सत्याग्रह की संकल्पना से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने कहा, "यदि मानवता को उन्नति करनी है, गाँधी अपरिहार्य हैं। उनका जीवन, विचार व कर्म एक शांति व

सौहार्दपूर्ण विश्व की दिशा में प्रस्तुत होते मानवतावादी दृष्टिकोण द्वारा प्रेरित था।" स्वीडन के अर्थशास्त्री गुनार मिर्डाल ने कहा, "अल्पविकसित देशों में, सुसम्पन्न समाजों में सामाजिक उद्वेग के गहराते संकट की घड़ी में, ऐसा प्रतीत होता है कि गाँधीवादी विचार व प्रयोजन–सिद्धि साधन उत्तरोत्तर युक्तिसंगत हो जाएँगे।"

मानवाधिकार उल्लंघन, ग़रीबी, व भूख का उल्लेख न करते हुए, आर्थिक नियंत्रणवाद हेतु संघर्ष व हिंसा की सदा बढ़ती योजनाबद्ध प्रक्रिया के साथ, एक हिंसक अन्तरराष्ट्रीय वातावरण में, गाँधीजी की सविनय–अवज्ञा व सत्याग्रह संबंधी संकल्पना उत्तरोत्तर गति पकड़ती जा रही है।

सविनय–अवज्ञा व सत्याग्रह की संकल्पना ने मानव–मुक्ति आंदोलनों के सिद्धांत व व्यवहार में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यह, वस्तुतः, दुनियाभर में सामाजिक व राजनीतिक आन्दोलनों को प्रेरित करती रही है। अहिंसा व सविनय–अवज्ञा के गाँधीवादी सिद्धांतों की जड़ें सत्याग्रह की संकल्पना में ही है। प्रति–नाभिकीय व ग्रीन मूवमॅन्ट्स, 1987 में चेकोस्लोवाकिया में राज्य नियंत्रणवादी साम्यवादी शासन का अंत, तथा सर्बियाई नृजातीय अत्याचार के सिरुद्ध कोसोवो में लोगों का विरोध–आन्दोलन बीती शताब्दी के कुछ महत्त्वपूर्ण अवज्ञा आन्दोलन हैं। जातीय व नृजातीय अंध देशभक्ति के उदय, और भूमण्डलीकरण प्रक्रिया के पतनोन्मुख स्वभाव ने सामाजिक व राजनीतिक आन्दोलनों की एक रणनीति के रूप में सविनय–अवज्ञा व सत्याग्रह की भूमिका को फिर से उजागर किया है।

13.2 सविनय–अवज्ञा की संकल्पना

"सविनय–अवज्ञा" शब्द–पद, जो दुनियाभर में सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने की एक रणनीति के रूप में व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता है, का कोई सटीक और विशिष्ट सम्पृक्तार्थ नहीं है। आमतौर पर 1849 में एक निबन्ध के शीर्षक के रूप में इस शब्द–पद को प्रयोग करने का श्रेय हैनरी डैविड थोरो को जाता है। थोरो ने अपने निबन्ध का शीर्षक "रिज़िस्टन्स टु सिविल गवर्नमॅण्ट" को बदलकर "सिविल डिसॅबीडिॲन्स" अर्थात् "नागरिक शासन का विरोध" के स्थान पर "सविनय–अवज्ञा" लिखा। इस बात का, बहरहाल, दस्तावेज रूप में कोई प्रमाण नहीं कि थोरो ने इस शब्द को स्वयं ही गढ़ा था, न ही उसके द्वारा इसके संकेतार्थ कोई कारण ही दिया गया है कि उसने अपने निबंध का शीर्षक क्यों बदला।

सविनय–अवज्ञा की संकल्पना का एक लम्बा और परिवर्ती इतिहास है जिसमें यूनानी युग से लेकर आज तक की लगभग पूरी मानवीय विचारधारा समाहित है। इस अवधारणा का औचित्य प्रतिपादन और विश्लेषण अनेक दार्शनिक, राजनीतिक व भाषायी दृष्टिकोणों से करने का प्रयास किया गया है।

सविनय–अवज्ञा संकल्पना किसी सरकारी प्राधिकरण द्वारा प्रतिपादित व रचित ऐसे कानून अथवा नीति के सार्वजनिक उल्लंघन कार्य अथवा प्रक्रिया को इंगित करती है, जो कोई व्यक्ति अथवा कोई समूह अनुचित और/अथवा असंवैधानिक मानता है। आवश्यक है कि सरकारी कानून अथवा नीतियों का यह उल्लंघन एक पूर्व–विचारित कृत्य हो और यह चेष्टा पहले से ही घोषित हो। कानून का उल्लंघन संभवतः हिंसा अथवा अहिंसा का रूप ले सकता है। यह सक्रिय अथवा 'निष्क्रिय' हो सकता है। चूँकि सविनय–अवज्ञा की मूल प्रवृत्ति जनचेतना को जगाना ही है, उक्त व्यक्ति अथवा समूह को कानून

अथवा नीतियों के उल्लंघनार्थ दण्ड को स्वीकार करने के लिए तैयार रहना पड़ता है। सविनय–अवज्ञा की कार्यवाही अथवा अकार्यवाही को सविनय–अवज्ञा के रूप में अर्ह सिद्ध होने के लिए, खुले रूप में दृढ़ता के साथ रखना पड़ता है। कानूनी प्रावधानों का महज अननुपालन ही स्वयं सविनय–अवज्ञा को जन्म नहीं देता।

सविनय–अवज्ञा की अवधारणा न्याय व सर्वकल्याण में निहित है और इसका अंत कतई सीमित नहीं होना चाहिए। सविनय–अवज्ञा आन्दोलन का मूल उद्देश्य विरोधों के रहते विवेक जगाना और उनके सद्–विवेक की अभ्यर्थना करना होता है।

यद्यपि सविनय–अवज्ञा की कार्यप्रणाली किसी भी हिंसक नृत्य अथ ग 'अहिंसक कार्यवाही' के सीमित ढाँचे में प्रतिबंधित नहीं है, अनेक ऐतिहासिक अथवा मनोवैज्ञानिक कारणों से, नागरिक अधिकार आन्दोलन के अधिकांश व्यवहर्त्ता अहिंसा के प्रति वचनबद्ध हैं। सविनय–अवज्ञा के कुछ शान्तिवादी विश्वासकर्त्ता यहाँ तक मानते हैं कि अहिंसा के प्रति एक सम्पूर्ण वचनबद्धता हिंसा के संभावित प्रयोग के मुकाबले नीतिशास्त्र की दृष्टि से श्रेष्ठ है।

समकालीन साहित्य में, सविनय–अवज्ञा की संकल्पना भारत में ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासन का विरोध करने हेतु महात्मा गाँधी व उनके अनुयायियों द्वारा अपनायी गई एक राजनीतिक रणनीति के रूप में समझी गई है। संयुक्त राज्य अमेरिका में नागरिक अधिकार आन्दोलन के दौरान, मार्टिन लूथर किंग, जूनियर ने भी इस रणनीति को सफलतापूर्वक प्रयोग किया।

सविनय–अवज्ञा की अवधारणा का उल्लेख करते हुए महात्मा गाँधी ने कहा, "मैं मानता हूँ यह (सविनय–अवज्ञा) सामान्यतः सरकार की नीतियों अथवा कानूनों में परिवर्तन लाने के उद्देश्य से किया जाने वाला, कानून के प्रतिकूल एक सब लोगों के लिए खुला हुआ, अहिंसात्मक और विवेकी कृत्य है। सविनय–अवज्ञा इस अर्थ में एक राजनीतिक कृत्य है कि यह ऐसे नैतिक सिद्धांतों द्वारा औचित्य–प्रतिपादित कार्य है जो नागरिक समाज व जन कल्याण की अवधारणा को परिभाषित करते हैं। यह तदोपरांत, राजनीतिक अभिशंसाओं पर निर्भर करता है जो कि स्व– अथवा समूह–हितार्थ किसी खोज के सामने होती हैं। एक सांवैधानिक लोकतंत्र के उदाहरण में, हम मान सकते हैं कि इस सम्प्रत्यय में उस न्याय की अवधारणा शामिल है, जिसके इर्दगिर्द संविधान स्वयं व्याप्त है।"

13.3 सविनय–अवज्ञा संकल्पना का इतिहास

सविनय–अवज्ञा की संकल्पना का एक लम्बा और रंगबिरंगा इतिहास है। यूनानी नाटकों में एण्टीगॉन प्रसंग के रूप में यह धारणा बहुत प्रसिद्ध थी। यही मूल प्रसंग था, लायसिस्ट्रेटा के युद्धरोधी मूलभाव का, जहाँ महिलाओं ने, अपने पुरुषों को छोड़ देने के अलावा, एक्रोपॉलिस तथा ट्रेज़री ऑफ एथेन्स पर कब्जा भी कर लिया था। नागरिक कानून तथा विवेक के बीच इस संघर्ष को जेरूसलम में मूर्ति–प्रचलितीकरण हेतु यहूदियों के निष्क्रिय विरोध में देखा जा सकता है।

मानव सभ्यता के लम्बे इतिहास भर में, वैयक्तिक स्वतंत्रता एवं राज्य के राजनैतिक प्राधिकरणों के बीच हमेशा संघर्ष होते आए हैं। सरकारी कानून अधिदेशों का पालन करने अथवा न करने में मर्ज़ी रखने की स्वतंत्रता हमेशा ही सविनय–अवज्ञा आन्दोलन का मूल विषय रहा है।

सुकरात ने सत्य का पालन और सत्य की खोज को ही मानव जीवन का मूल उद्देश्य माना। उनके अनुसार, न्याय सत्य का एक अवयव है। यद्यपि उनका दृढ़ विश्वास था कि व्यक्ति एक सुव्यवस्थित समाज में ही विकास कर सकता है, और राज्य का आज्ञापालन करना उसका नैतिक कर्त्तव्य है, वह विवेक के विषय को छोड़ने के लिए तैयार नहीं थे। वह इस बात का पुरजोर समर्थन करते थे कि राज्य को किसी व्यक्ति को अन्यायपूर्ण तरीके से व्यवहार करने हेतु बाध्य करने का कोई अधिकार नहीं है। यही वह क्षेत्र है, जहाँ उन्होंने सविनय–अवज्ञा की भूमिका का औचित्य प्रतिपादन किया।

पूर्ववर्ती ईसाईजन सविनय–अवज्ञा आन्दोलनों का प्रयोग परमेश्वर के प्रति धार्मिक व नैतिक आज्ञापालन हेतु तर्क के रूप में करते थे। पश्चिमी देशों में यही था, सर्वप्रथम अहिंसात्मक अवज्ञा आन्दोलन। सविनय–अवज्ञा आन्दोलन के सिद्धांत का प्रयोग सामाजिक–राजनैतिक परिवर्तन के एक साधन के रूप में अनेक अवसरों पर किया जाता रहा है।

सविनय–अवज्ञा की आधुनिक संकल्पना का उद्‌गम थॉकस हॉब्बस जैसे अनुभववादियों के लेखों में पाया जाता है। सत्रहवीं शताब्दी में इंग्लैण्ड की राजनीतिक स्थिति ने हॉब्बस को बाध्य किया कि वह मौलिक नैसर्गिक अधिकारों के सिद्धांत को सरकार के आज्ञापालन हेतु आधार रूप में अंगीकार करे। उसने स्वीकार किया कि लोगों को अधिकारों की गारण्टी देने के लिए, राज्य को एक नागरिक शान्ति का माहौल सुनिश्चित करना चाहिए। वह राज्य में लोगों का असम्मत होने का अधिकार देने को तैयार नहीं थे। वह एकमात्र स्थिति जिसके तहत लोग असम्मत होने का अधिकार रखने के हक़दार थे, तब थी जब वह राज्य व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा करने और समाज में नागरिक शान्ति सुनिश्चित करने में पर्याप्त रूप से सबल न हो। सविनय–अवज्ञा का अधिकार वस्तुतः हॉब्बस की विशिष्ट शर्तबन्दी में अन्तर्निहित था।

जॉन लॉक का मत था कि लोगों को "अपनी मूल स्वतंत्रता को फिर से प्राप्त करने और एक नई सरकार स्थापित करने का अधिकार" प्राप्त है। यदि वह राज्य के प्राधिकरणों के विरोध–न्यायसांगत्य के विषय में इतना सटीक और स्पष्ट न भी हो, वह स्वीकार करते थे कि लोगों को स्वतंत्रताएँ, अधिकार व सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने हेतु अहिंसात्मक व हिंसात्मक दोनों प्रकार की सविनय–अवज्ञा चेष्टाएँ करने का अधिकार प्राप्त है।

विरोधार्थ अधिकार संकल्पना निर्धारित करने हेतु अनुभवजन्य उपयोगितावादी उपगम्य का विश्लेषण करते समय, हैनरी डेविड थोरो ने एक आदर्शवादी अराजकतावादी दृष्टिकोण अपनाया। उनका दृढ़ विश्वास था कि ऐसे किसी भी *नागरिक कानून* को विद्यमान रहने का नैतिक समर्थन प्राप्त नहीं है, जो *नैतिक कानून* के क्षेत्रों का अतिक्रमण करने का प्रयास करे। 1948 की सार्वभौम मानवाधिकार घोषणा, जिसने मनुष्य के मूल अधिकारों हेतु मानवीय आधारों पर ज़ोर दिया, थोरो के दावे का समर्थन करती है। अपने 'ट्रिटाइज़ ऑफ ह्यूमन नेचर' में, डैविड ह्यूम ने सविनय–अवज्ञा की एक इच्छास्वातंत्र्यवादी संकल्पना प्रस्तुत की है।

जैरेमी बैन्थम ने दृढ़ता के साथ कहा कि सद्विवेकी नागरिकों को "कर्त्तव्यों के साथ–साथ हित की भी विषयवस्तु के रूप में विरोध–उपायों को अंग बनाना पड़ता है।" जेम्स मिल ने सविनय–अवज्ञा अवधारणा की ओर एक विरोधाभासी रवैया अपनाया। उसने सीमित सविनय–अवज्ञा के समर्थन अधिकार का विरोध करते हुए हिंसात्मक क्रांति के अधिकार का समर्थन किया।

थॉमस हॉब्बस, जॉन लॉक, डैविड ह्यूम, जैरेमी बैन्थम तथा जेम्स मिल जैसे सभी अनुभववादी–जन स्वतंत्रता वाली एक नकारात्मक संकल्पना के पक्ष में थे। उन्होंने वैयक्तिक स्वतंत्रता की मूल शर्त के रूप में निग्रहों के अभाव पर ज़ोर दिया। सरकारी प्राधिकरण के हर तरह के अनुचित प्रयोग के विरुद्ध उनके विचारों ने सविनय–अवज्ञा की आधुनिक परिकल्पनाओं हेतु मूल आधार प्रदान किया।

आइडिअलिस्ट स्कूल यानी आदर्शवादी विचारधारा सविनय–अवज्ञा संकल्पना के प्रति कम सत्कारशील थी। अरस्तू से लेकर रूसो तथा हेगेलियन के साथ–साथ मार्क्सवादी परम्पराओं के समर्थक भी, सभी ने व्यक्ति के ऊपर राज्य के महत्त्व पर ज़ोर दिया है। स्वतंत्रता की सकारात्मक संकल्पना पर ज़ोर देते समय, इन आदर्शवादियों का मत था कि स्वतंत्रता की सकारात्मक संकल्पना केवल किसी समष्टि के प्रति एक अप्रतिबन्ध निष्ठा द्वारा ही सम्पादित की जा सकती है।

सिन्डिकलिस्ट्स अर्थात् श्रमिक संघवादियों ने केवल लोकतांत्रिक श्रमिक संघ नेतृत्व के आज्ञापालन पर ज़ोर दिया, ताकि सकारात्मक स्वतंत्रता क्षेत्रों तक पहुँच बने। हमें नहीं भूलना चाहिए कि आदर्शवादी (टॉलस्टॉय) अथवा समाजवादी (बैकुनिन, क्रोपोत्किन) परम्परा में अराजकतावदियों ने हमेशा स्वतंत्रता की सकारात्मक संकल्पना पर आधारित राज्य व्यवस्था के एक समूचे परित्यजन हेतु दलील दी है। वस्तुतः, उन्होंने सविनय–अवज्ञा के माध्यम से मनुष्य के सामाजिक आत्मबोध को एक नया उपगम्य प्रदान किया है।

राजनीति–सिद्धान्ती जन मानव धर्म की धारणा को सविनय–अवज्ञा की आधुनिक धारणा के एक महत्त्वपूर्ण आधार के रूप में लेते हैं। यद्यपि अरस्तू व सिसरो दोनों ही नागरिक अवधारणा के किसी सिद्धांत को आगे बढ़ाने में असफल रहे, इस विषय पर उनके दृष्टिकोणों ने निश्चित रूप से एक सविनय–अवज्ञा आन्दोलन के औचित्य प्रतिपादन हेतु मार्ग प्रशस्त किया। अरस्तू ने कहा, कि "अनुचित कानून कोई कानून नहीं होता।" सिसरो का मत था कि "एक सच्चा कानून – नामतः सही आचरण – जो प्रकृति के अनुसार होता है, सभी मनुष्यों पर लागू होता है और अपरिवर्तनीय एवं शाश्वत होता है।" इन विचारों ने सविनय–अवज्ञा आन्दोलन को एक मजबूत धरातल प्रदान किया है।

थॉमस एक्वीनास ने अनुचित कानूनों को "कानूनों की बजाय हिंसा के कृत्य" माना। उनके अनुसार, "ऐसे कानून सद्विवेक के प्रति बाध्य नहीं करते।" तथापि वह चर्च के प्रति बिल्कुल भी किसी प्रकार की अवज्ञा की स्वीकृति नहीं देते और, राज्य के प्रति अवज्ञा की स्वीकृति, विरले ही उदाहरणों में।

आधुनिक नव–थौमसवादियों ने सविनय–अवज्ञा विषयों के संबंध में एक्वीनास की यही सचेत प्रवृत्ति अपनायी। यूरोपीय यहूदियों के जातिसंहार के विरुद्ध कोई निर्भीक रुख न अपनाने के कारण पोप पायस द्वादश की आलोचना की गई। रोल्फ होक्कुथ ने अपने नाटक, *द डैप्युटि* (1963), में हिटलर के आक्रमण का आज्ञापालन न करने अथवा विरोध करने हेतु पर्याप्त कार्रवाई न करने के लिए पोप की आलोचना की।

हाल के वर्षों में, चर्च ने सविनय–अवज्ञा के संबंध में एक निर्भीक कदम उठाया है। अवज्ञा का अधिकार अब, ईश्वरीय कानूनों के उल्लंघन तक सीमित नहीं रहा है। पोप जॉन ने कहा, "प्रत्येक जनाधिकार का अनिवार्य कर्त्तव्य मानव जन के अनुल्लंघनीय अधिकारों के रक्षार्थ और उसके कर्त्तव्य पालन में मदद करने के वास्ते होना चाहिए। इसका अर्थ है कि यदि कोई सरकार मनुष्य के अधिकार को स्वीकृति नहीं देती अथवा उनका उल्लंघन करती है, वह न सिर्फ़ अपने कर्त्तव्य में विफल है, बल्कि उसके विधानों में कानूनी वैधता का नितान्त अभाव भी है।"

13.4 सविनय–अवज्ञा सिद्धांत और अस्तित्ववादी दर्शन

अस्तित्ववादी दर्शन से निष्कर्षित, अन्यत्रभाव प्रसंग समसामयिक सविनय–अवज्ञा परिकल्पनाओं का एक महत्त्वपूर्ण पहलू है। एल्बर्ट कामू को इस क्षेत्र में एक अग्रणी निबन्ध लेखक माना जाता है। यद्यपि एल्बर्ट कामू व ज़ाँ पॉल सार्त्र दोनों तथा अन्य अस्तित्ववादी विचारकों का विश्वास है कि वैधता (अथवा विधिसंगतता) हेतु अथवा आज्ञापालन हेतु किसी भी नैतिक अथवा राजनीतिक प्राधिकरण के दावे के लिए कोई वैध आधार नहीं है, कामू उत्पीड़न विरोध पर अपने नज़रियों के बारे में ज़्यादा स्पष्टवादी थे। उनका मत था कि न्यायाधिदेशों का सम्मान कानून के सम्मान से ऊपर होना चाहिए। अपने नोबेल पुरस्कार संबोधन में, कामू ने अपने 'अपनी ही जानकारी पर निर्भर रहने से इंकार और उत्पीड़न के विरोध' की पुरजोर वकालत की। वह शारीरिक बल, प्रयोग तक के विरुद्ध नहीं थे, तथापि उन्होंने इसे हमेशा राज्य की निकृष्टतम हिंसा से लड़ने हेतु एक सर्वोच्च बुराई के रूप में माना। उन्होंने प्रत्येक सत्ता संभ्रांत तथा राज्य प्राधिकरण को न्याय का शत्रु माना। उन्होंने शान्तिवादियों को 'रूढ़िवादी शून्यवादियों' के रूप में देखा।

13.5 सविनय–अवज्ञा व सत्याग्रह की गाँधीवादी संकल्पना

महात्मा गाँधी को सविनय–अवज्ञा आन्दोलन के इतिहास में पुरगामी सिद्धांती माना जाता है। सविनय–अवज्ञा और सत्याग्रह की गाँधीवादी संकल्पना हमारे इस दौर में मानवता को महानतम योगदान है। एल्बर्ट आइन्सटाइन ने कहा, "मेरा विश्वास है कि एक अधिराष्ट्रीय आधार पर विश्व में शान्ति लाने की समस्या केवल एक बड़े स्तर पर गाँधी पद्धति लागू करके ही हल होगी।" मार्टिन लूथर किंग, जूनियर ने कहा, "अपनी पृष्ठभूमि से मैंने अपने विनिमयकारी ईसाई आदर्श हासिल किए, गाँधी से, मैंने सांग्रामिक तकनीक सीखी।"

गाँधीजी ने अपनी सविनय–अवज्ञा संकल्पना को 'सत्याग्रह' अथवा 'सत्य बल' के नाम से पुकारा। उनके अनुसार, 'सविनय–अवज्ञा' शब्द–पद में विशेषण 'नागरिक' का अर्थ हुआ, शांतिपूर्ण, भद्र और एक 'सभ्य' विरोध। उनके अनुसार, निष्क्रिय विरोध की संकल्पना 'सत्याग्रह' की पूर्ण विवक्षाओं को समझ लेने हेतु अपर्याप्त है। उन्होंने कहा कि सरकार की नाइन्साफी और यादृच्छिकता का विरोध हमें न सिर्फ़ नकारात्मक रूप से ही करना चाहिए, बल्कि ऐसा बिना किसी विद्वेष–भाव से भी करना चाहिए।

इसके पूर्ववर्ती चरण में, गाँधीजी ने निष्क्रिय विरोध को एक 'दुधारी तलवार' बताया था। उन्होंने कहा, "... यह उसे सुखी बनाता है जो उसे प्रयोग करता है और उसे भी विरुद्ध यह प्रयोग किया जाता है। रक्त की एक बूँद भी बहाये बिना, यह दूरगामी परिणाम देता है ... एक उचित उद्देश्य हो, असीम कष्ट हेतु समाई हो, और हिंसा का परिवर्जन हो तो जीत पक्की है।"

तदोपरांत, गाँधीजी ने 'निष्क्रिय विरोध' शब्द–पद का प्रयोग छोड़ दिया, और 'सत्याग्रह' शब्द को चुना। सत्याग्रह की संकल्पना किसी भी घृणा भाव और हिंसा–साधन से रहित है। यह आत्मिक शुद्धता पर आधारित है। टॉलस्टॉय की भाँति, गाँधीजी राजनीतिक कार्यों के प्रति अपनी प्रतिज्ञाओं में सभी प्रकार की हिंसा को विरुद्ध थे। आर्न नेस, गाँधी पर एक अग्रगामी सिद्धांती ने गाँधीजी की "राजनीतिक

कार्य के नैतिक रूप से स्वीकार्य विधानों को खोजने और क्रियान्वित करने में रचनात्मक कल्पना और असामान्य उद्भावनी शक्ति'' पर ज़ोर दिया है। सत्याग्रह, सरकार के यादृच्छिक तरीकों और कार्यों के प्रति अहिंसात्मक विरोध की अनन्य कार्यविधि, वास्तव में, मानवता को उनका महानतम उपहार है।

गाँधीजी के अनुसार, अहिंसा (ग़ैर–जबरदस्ती) और सत्य अविच्छेद्य हैं। उन्होंने कहा कि ''अहिंसा साधन है; सत्य साध्य है।'' गाँधीजी ने सत्याग्रह का सामाजिक आन्दोलनों के लिए एक उत्तोलक के रूप में प्रयोग किया।

सविनय–अवज्ञा व सत्याग्रह की गाँधीवादी संकल्पना को समझने के लिए इस विषय पर गाँधीजी के दृष्टिकोण को विस्तार से जानने की आवश्यकता है। गाँधीजी ने कहा, ''सत्याग्रह आमतौर पर लोगों को सविनय–अवज्ञा अथवा नागरिक विरोध के रूप में दिखाई पड़ता है। यह नागरिक इस अर्थ में है कि यह अपराधात्मक नहीं है। विधिभंजक ... खुले रूप से और शिष्ट रूप से (अनुचित कानून) तोड़ता है और चुपचाप उनके उल्लंघन का दण्ड भुगतता है। साथ ही, विधिप्रदाताओं की कार्रवाई के विरुद्ध अपने विरोध दर्ज करने के लिए, उसके लिए अप्रतिबन्धित है कि वह ऐसे अन्य कानूनों की अवज्ञा करके, जिनका उल्लंघन नैतिक चरित्रहीनता नहीं बनता, राज्य से अपना सहयोग वापस ले ले। मेरे विचार से, सत्याग्रह की सुन्दरता और प्रभावोत्पादकता इतनी वृहद और शिक्षा इतनी सरल है कि इसका प्रचार बच्चों में भी किया जा सकता है।''

गाँधीजी ने पुरजोर वकालत की कि अनुचित कानूनों की सूरत में सविनय–अवज्ञा का प्रस्ताव करना हर व्यक्ति का जन्मसिद्ध अधिकार है। 1920 में उन्होंने लिखा, ''मेरी इच्छा है मैं हर व्यक्ति को समझा सकूँ कि सविनय–अवज्ञा व्यक्ति का स्वाभाविक अधिकार है। मनुष्य होने के नाते वह इसे अविरत नहीं छोड़ता। सविनय–अवज्ञा, इसी कारण, जब राज्य अराजक, अथवा जो वही चीज है, भ्रष्ट हो गया हो, एक सेवार्पित कर्त्तव्य हो जाता है। साथ ही, वह नागरिक जो ऐसे राज्य से वस्तु विनिमय करता है, भ्रष्टाचार अथवा अन्धेर में सहभागी होता है।''

हण्टर कमेटी, जो भारत सरकार द्वारा 1919 में उपद्रवों की जाँच–पड़ताल करने हेतु गठित की गई थी, के समक्ष अपने साक्ष्य में गाँधीजी ने दावा किया कि सविनय–अवज्ञा की माँग अपेक्षित है और एक लोकतंत्र में विधिसंगत भी है। उन्होंने इसके सांवैधानिक पहलुओं पर प्रकाश डाला। हण्टर कमेटी को इस बात के जवाब में कि यदि वह खुद एक गवर्नर होते, तो कानून तोड़ने वालों के साथ क्या व्यवहार करते, गाँधीजी ने उत्तर दिया, ''यदि मैं सरकार का प्रभारी होता और ऐसे आदमी से रूबरू होता कि जो पूरी तरह से सत्य की खोज में, हिंसा दण्ड प्रयोग के बिना अनुचित कानूनों से प्रतिकार चेष्टा के प्रति दृढ़प्रतिज्ञ है, मैं इसका स्वागत करता और स्वीकार करता है कि वे ही सर्वोत्तम संविधानवादी हैं, और एक गवर्नर के रूप में मैं उन्हें सलाहकार बतौर बगल में बैठाता जो मुझे सही राह दिखाते।''

कुछ लोगों ने एक सार्वभौम तत्त्वज्ञान के रूप में सत्याग्रह की प्रभावोत्पादकता पर संदेह किया है। गाँधीजी की अभिदृष्टि विदेशी शासन से स्वाधीनता प्राप्ति, भारतीयों द्वारा सरकार संचालन तक सीमित नहीं थी। उन्होंने भारत की आत्मा हेतु संघर्ष किया, न कि महज एक दृश्यमान राज्य–व्यवस्था हेतु।

'सविनय–अवज्ञा व सत्याग्रह' की संकल्पना में 'सविनय–अवज्ञा' तथा सत्याग्रह दोनों ही एक विवाद–समाधान सिद्धांत के रूप में गहरे अन्तर्सम्बद्ध हैं। गाँधीजी ने कहा, ''तजुर्बे ने मुझे सिखाया है कि शिष्टता ही सत्याग्रह का सर्वाधिक कठिन भाग है। शिष्टता का यहाँ अर्थ अवसर–विशेष हेतु

संस्कृत, वाणी की अधिक सतही मृदुलता नहीं है, वरन् एक अन्तर्जात मृदुलता और प्रतिद्वंद्वी का भला करने की इच्छा है। इन्हें स्वयं को सत्याग्रह के प्रत्येक कृत्य में प्रकट करना चाहिए।''

उक्त अवधारणा के इ.. नए दिग्विन्यास ने शासनकला में विवाद–समाधान के यथार्थ उपगम्यों हेतु एक काल्पनिक आयाम प्रदान किया है। वस्तुतः, मानवजाति के नितान्त अस्तित्व को मौजूदा ख़तरा प्रत्येक मनुष्य में केवल हृदय के एक क्रांतिकारी परिवर्तन वाले गाँधीवादी उपगम्य द्वारा ही दूर किया जा सकता है।

हरेक राजनीतिक व्यवस्था का मूल उद्देश्य होता है, एक ऐसे सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक व्यवस्था का निर्माण करना जिसमें व्यक्तिजन अपने निरन्तर नैतिक विकास की मानसिक अपेक्षाओं को पूरा कर सकें। सविनय–अवज्ञा व सत्याग्रह की गाँधीवादी पद्धति अकेले ही सभ्य समाज में ऐसे परिस्थितियाँ बनाने में मदद करती है, जिनमें रहकर राज्य–व्यवस्था में प्रगति व समृद्धि हेतु एक अनिवार्य आवश्यकता के रूप में सभी मूल्यों व पद्धतियों की कदर की जा सकती है। डॉ. किंग ने नागरिक अधिकार आन्दोलन के दौरान इस गाँधीवादी पद्धति को बड़ी ही सफलतापूर्वक लागू किया। उन्होंने कहा, ''हर समुचित कानून एक संहिता है, जो नैतिक कानून अथवा ईश्वरीय कानून के साथ संमजस्यकारी है। हर अनुचित कानून एक ऐसी संकेतकी है, जो नैतिक कानून के साथ समन्वय से परे है।'' थॉमस एक्वीनास के शब्दों में, हर अनुचित कानून एक ऐसा मानवीय कानून है जिसकी जड़ें शाश्वत और प्राकृत कानून में नहीं जमतीं। कोई भी कानून जो मानव–व्यक्तित्व को उन्नत करे समुचित है। कोई भी कानून जो मानव–व्यक्तित्व को अवनत करे अनुचित है। सभी पार्थक्य–विधान अनुचित हैं, क्योंकि पृथक्करण आत्मा को विकृत करता है और व्यक्तित्व को क्षतिग्रस्त।

गाँधीजी ने अहिंसा का संकेत देने के लिए 'सविनय–अवज्ञा' में 'नागरिक' पर ज़ोर दिया। अहिंसा, जिस पर कि इस विश्लेषण में प्रकाश डाला गया है, सकारात्मक के साथ–साथ एक नकारात्मक सम्पृक्तार्थ भी रखती है। अपने नकारात्मक रूप में, इसका अर्थ होता है किसी भी जीव हेतु 'अक्षति'। अपने सकारात्मक रूप में इसका अर्थ है, 'विशालतम प्रेम' और 'वृहदतम सद्भाव'। बौद्ध साहित्य में इसको रचनात्मक सहअस्तित्व की एक प्रवृत्ति के रूप में महत्त्व दिया गया है।

हैनरी थोरो के अनुसार, यदि 'उच्च मूल्य' और 'निम्न मूल्य' के बीच कोई विवाद है, तब नागरिक को किसी भी सूरत में राज्य–विधान के समक्ष अपने सद्विवेक को नहीं तिलांजलि नहीं देनी चाहिए। उन्होंने कहा कि ''विधिकर्ता, राजनयिक राज्य की ऐसा मुख्यतः अपने दिमाग़ से करते हैं; और चूँकि वे विरले ही कोई नैतिक भेदभाव करते हैं, वे ग़ैर–इरादतन, दुष्टात्मा की अपेक्षापूर्ति की संभावना वैसे ही रखते हैं जैसे कि परमात्मा की। कुछ इनेगिने लोग ही राज्य की अपेक्षापूर्ति अन्तःकरण से भी करते हैं, और इसलिए अनिवार्य रूप से इसे बहुधा बचाते हैं ..., कानून के लिए किसी भी प्रकार के अनुचित आदर की आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि वह लोगों को अनेक अनुचित काम करने के लिए संकट में डालेगा। जहाँ 'अनैतिकता' और 'वैधता' में संघर्ष होता है, एकमात्र बाध्यता जो मैं मानने का अधिकार रखता हूँ वो है किसी भी समय वह करना जो मैं सही समझता हूँ, जो मुझे करना है वो है यह देखना, किसी भी कीमत पर, कि मैं स्वयं को उस अन्याय के हाथों न सौंप दूँ जिसकी मैं निंदा करता हूँ।''

दिसम्बर 1929 में हुए कांग्रेस के लाहौर सत्र में पारित किए गए स्वतंत्रता–संकल्प के अनुसरण में कांग्रेस पार्टी ने सविनय–अवज्ञा आन्दोलन चलाया। यह अधिराज्य का दर्जा दिए जाने हेतु कांग्रेस की माँग स्वीकार करने से ब्रिटिश राज के इंकार का परिणाम था। लाहौर षड्यंत्र केस, 1929 में जेल में जतिन दास की दुःखांत मृत्यु, मेरठ षड्यंत्र केस जैसे कारकों ने भी कांग्रेस को स्वतंत्रता की माँग हेतु

बाध्य किया। यह सविनय–अवज्ञा आन्दोलन अनेक रूपों में व्यक्त हुआ, जैसे व्यापक कानून–उल्लंघन, ब्रिटिश माल का बहिष्कार, सेना व पुलिस द्वारा समर्थन–वापसी, और सरकार से असहयोग। गाँधीजी ने नमक–कानून तोड़ने हेतु 1930 में सरकार को लिखे गए अपने पत्र में इन सभी माँगों पर प्रकाश डाला था।

गाँधीजी ने अपना सत्याग्रह आन्दोलन दक्षिण अफ्रीका में शुरू किया। तदोपरांत, अपनी भारत वापसी पर ब्रिटिश प्रशासन के विरुद्ध असहयोग आन्दोलन का नेतृत्व करने के लिए, उन्होंने इसका प्रयोग चम्पारण, खेड़ा, और बारदोली के दमित श्रमिकों व किसानों की शिकायतों को दूर करने के लिए किया। गाँधी को उद्धृत करने के लिए, "... सत्याग्रह की बात करना एक हथियार की बात करना है .... वह हथियार जो वैधता द्वारा सीमित किए जाने से इंकार करता है। चुनौती, अवैधता, और कार्रवाई – अनेक चाबियाँ हैं जिनसे सत्याग्रह लैस है ... चूँकि सत्याग्रह हिंसा को अग्राह्य करता है, वह अवैधता से सम्बन्ध नहीं तोड़ता।"

गाँधीजी ने हमेशा उचित साधनों के मूल्य पर ज़ोर दिया। उनके अनुसार, "अनुचित साधन एक असत साध्य में फलित होते हैं ... असत्य का सहारा लेकर कोई सत्य तक नहीं पहुँच सकता। सत्य आचरण ही सिर्फ़ सत्य तक पहुँचता है। अहिंसा सत्य में ही निहित है।"

गाँधीजी द्वारा आत्म–कष्ट और सत्याग्रह पर ज़ोर दिए जाने के कारण कई बार उनकी भर्त्सना की गई है। कुछ तो इसका गाँधी के चरित्र में मासोवाद (परपीड़न–कामुकता) के पुट के रूप में वर्णन करते हैं, जबकि दूसरों ने भारतीय आध्यात्मिकता पर ज़ोर देने हेतु हिन्दू धर्म–ग्रंथों को छान मारा है। परन्तु आत्म–कष्ट और सत्याग्रह हेतु गाँधीवादी उपगम्य का वैयक्तिक आत्मसंतापन से किंचित् ही सरोकार है। यह किसी उद्देश्य की कामयाबी हेतु एक साधारण सी शर्त है। इसका मतलब यह नहीं कि सत्याग्रह हेतु संघर्ष में कोई कष्ट नहीं होगा। सहज रूप से इसका अर्थ है कि व्यक्ति की स्वतंत्रता का अभिकथन और उसका असम्मत होने का अधिकार। यह तरीका प्रायः किसी विरोधी की मनोदशाओं को बदलने हेतु एक मनोवैज्ञानिक साधन के रूप में काम करता है। गाँधीजी ने कहा, "निष्क्रिय विरोध के दौरान, एक उपयुक्त अवसर आने पर शस्त्र–प्रयोग हेतु संभावना होती है, सत्याग्रह में सर्वाधिक अनुकूल परिस्थितियों में भी शारीरिक बल–प्रयोग निषिद्ध है। शस्त्र–प्रयोग के साथ–साथ ही हो सकता है कि निष्क्रिय विरोध किया जाए। सत्याग्रह और पाशविक बल चूँकि एक–दूसरे के प्रतिवाद हैं, ये कभी भी एक साथ नहीं चल सकते।"

सत्याग्रह की गाँधीजी की संकल्पना धर्म व आध्यात्मिक मूल्यों में उनकी आस्था का ही परिणाम है। उनका विश्वास था कि सर्वोच्च स्थिरीकृत सिद्धांत जो सभी प्राणियों व ब्रह्माण्ड को संचालित करता है, वह प्रेम व अहिंसा के सिवा और कुछ नहीं है, और गीता ने अहिंसा का यह संदेश 'प्राण बल' के रूप में दिया।

सत्याग्रह की गाँधीवादी संकल्पना महज कोई विवाद–समाधान अथवा अन्याय का अहिंसात्मक विरोध–साधन नहीं है। यह एक एकीकृत संकल्पना है, जिसमें एक सत्याग्रही की सम्पूर्ण जीवन–प्रक्रिया आती है। इसमें शामिल हैं : सत्य, अहिंसा, प्राजलता, अपरिग्रह (चोरी न करना), स्वदेशी, निर्भयता, जीविका–उद्योग, अस्पृश्यता निवारण, इत्यादि। सविनय–अवज्ञा 'सत्याग्रह' की एक 'शाखा' है। सभी 'सत्याग्रह' कभी भी सविनय–अवज्ञा नहीं हो सकते, जबकि सविनय अवज्ञा के सभी उदाहरण सत्याग्रह के उदाहरण हैं। गाँधीजी ने कहा, "इसका मूल अर्थ सत्य पर डटे रहना है, यानी कि सत्य बल पर। मैंने इसे 'प्रेम बल' अथवा 'प्राण बल' नाम दिया है।"

13.6 व्यवहार में सविनय–अवज्ञा

सविनय–अवज्ञा व सत्याग्रह की गाँधीवादी अवधारणा समकालीन विश्व में प्रासंगिकता रखती है। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने उस पीढ़ी की आवाज़ को ही गुँजायमान किया, जब उन्होंने कहा, गाँधी एक 'जीवित सत्य', मानवतावाद के एक प्रतीक थे। गाँधीजी ने सविनय–अवज्ञा पद्धति का सर्वप्रथम प्रयोग 1913 में दक्षिण अफ्रीकी सरकार की भेदभावपूर्ण नीतियों के खिलाफ़ विरोध–प्रदर्शन हेतु दक्षिण अफ्रीका में ट्रान्सवर्ल की ओर अपने कूच में किया। यही था, गाँधीजी के नेतृत्व में सविनय–अवज्ञा का प्रथम वास्तविक जन–आन्दोलन। गाँधीजी स्मट्स प्रशासन को परेशान करने के पक्ष में नहीं थे। जब उन्हें लगा कि स्मट्स महोदय मुसीबत में हैं, उन्होंने अपने परियोजित कूचों में से एक को स्थगित कर दिया। गाँधीजी की इस कार्रवाई पर टिप्पणी करते हुए, लुइस फ़िशर, एक पुरगामी पत्रकार ने लिखा : "अन्तोगत्वा, गाँधी ने स्मट्स पर जीत हासिल नहीं की, बल्कि उन्होंने स्मट्स को ही जीत लिया।"

1918 में गाँधीजी ने भारत में सविनय–अवज्ञा आन्दोलन का प्रयोग अहमदाबाद के वस्त्रोद्योग कर्मियों हेतु अपने अभियान के दौरान किया। भारत में गाँधी के नेतृत्व में चलाए गए सविनय–अवज्ञा आन्दोलनों के कुछ उदाहरण हैं –1930 का नमक सत्याग्रह, 1930 में ही स्वतंत्रतार्थ सविनय–अवज्ञा आन्दोलन, और 1939 में अछूतों की सामाजिक स्थिति सुधारने हेतु उनका आमरण अनशन।

दक्षिण अफ्रीका के लोगों ने औपनिवेशिक शासन से आज़ादी की माँग करने हेतु सविनय–अवज्ञा को गाँधीवादी पद्धति को अपनाया। कुछ ऐतिहासिक व्यापक सविनय–अवज्ञा आन्दोलन हैं: 1952 में दक्षिणी अफ्रीकी सरकार की पृथग्वासन नीतियों के खिलाफ़ सविनय–अवज्ञा आन्दोलन, 1957 में जोहैनसबर्ग बस बहिष्कार, और शार्पविल जनसंहार के विरुद्ध चीफ़ अलबर्ट जे. लुथुली के नेतृत्व में 1960 का कूच।

अमेरिकी बमबारी के खिलाफ़ दक्षिण वियतनाम में बौद्धों द्वारा सविनय–अवज्ञा आन्दोलन अहिंसा–सिद्धांत से ही प्रेरित था। सविनय–अवज्ञा आन्दोलन के अन्य ऐतिहासिक उदाहरण रहे : डेनमार्क और नॉर्वे में जर्मन प्रग्रहण के विरुद्ध आन्दोलन, उन्नीस सौ पचास के दशक में सिसली में डैनिलो डोल्की की हड़ताल, पश्चिमी यूरोप में आण्विक निःशस्त्रीकरण अभियान, पोलैण्ड में अहिंसात्मक प्रदर्शन, 1953 में तत्कालीन सोवियत संघ में वोर्कुटा जेल विद्रोह, 1955 में मोण्टगोमेरी नागरिक अधिकार कूच, और 1965 में औकलैण्ड में सैनिक अड्डे की ओर वियतनाम–विरोधी युद्ध प्रयाण।

सविनय–अवज्ञा आन्दोलन दुनिया भर में दिन–ब–दिन ज़ोर पकड़ रहा है।

13.7 सारांश

वियतनाम–विरोधी युद्ध, सिविल राइट्स, ड्राफ्ट रिज़िस्टन्स, आण्विक शस्त्र–विरोधी आन्दोलन, तथा पश्चिमी यूरोप, अमेरिका, व विश्व के अन्य भागों में दूसरे आन्दोलनों के एक जमघट ने हर लोकतांत्रिक व्यवस्था में सविनय–अवज्ञा रणनीति विषयक एक गर्मागर्म बहस को जन्म दिया है। इस विषय और समसामयिक अन्तरराष्ट्रीय व्यवस्था में इसकी प्रासंगिकता पर संसार के विभिन्न भागों में विभिन्न दृष्टिकोणों से बहस और चर्चा की जा रही है। यद्यपि विभिन्न राज्य व्यवस्थाओं द्वारा लोकतांत्रिक रूप से पारित कानूनों के खिलाफ किसी भी विरोध को सहन न करने वाले रूढ़िवादी विचारों का अम्बार

लगा है, सविनय–अवज्ञा आन्दोलन की गाँधीवादी संकल्पना के पक्ष में सतर्क लोगों का एक उल्लेखनीय मत भी है।

जॉन रॉल्स ने एक रामसामयिक लोकतांत्रिक व्यवस्था में सविनय–अवज्ञा आन्दोलन की संकल्पना पर चर्चा करते हुए कहा, "कानून बनाने का अधिकार इस बात की गारण्टी नहीं देता कि विचार–विनिमय सही रूप से किया गया; और जबकि नागरिक लोकतांत्रिक आधिकरण के निर्णय के समझ अपना आचरण समर्पित कर देता है, वह उसे अपना निर्णय समर्पित नहीं करता। साथ ही, यदि उसके निर्णय में, किसी बहुमत के अधिनियमन अन्याय की एक निश्चित सीमा का उल्लंघन करते हैं, उक्त नागरिक सविनय–अवज्ञा पर विचार कर सकता है।" उन्होंने कहा कि "सविनय अवज्ञा इस अभिप्राय से एक राजनीतिक कृत्य है कि यह उन नैतिक सिद्धांतों द्वारा सही ठहराया गया कृत्य है, जो शिष्ट समाज व जन–कल्याण की अवधारणा को परिभाषित करते हैं।"

बर्टन ज़्वीबैक ने कहा, "लोकतांत्रिक सरकारों को न्याय व अधिकार से संबंधित मतभेदों का आदर करने हेतु एक विचार–सहमति का अवश्य समावेश करना चाहिए।"

सविनय–अवज्ञा लोकतंत्र के साथ असंगत नहीं है। जब आम शिकायतों से परम्परागत माध्यम न्यायसंगत माँगों को पूरा करने में प्राप्ति हेतु सविनय–अवज्ञा एक रणनीति बन जाती है। समसामयिक समाज में सम्प्रदायवाद के क्रोधोन्माद, जातिसंहार और सामाजिक अन्याय की बाज़ारोन्मुखी प्रक्रिया के चलते, सविनय–अवज्ञा व सत्याग्रह की गाँधीवादी पद्धति उत्तरोत्तर लोकप्रिय होती जा रही है।

एक अल्पज्ञ द्रष्टा को यह प्रतीत हो सकता है कि सविनय–अवज्ञा व सत्याग्रह की अवधारणा विभिन्न धार्मिक अवस्थाओं के बीच आदर्शों के यथार्थ संयोजन के विरुद्ध जाती है और सविनय–अवज्ञा आन्दोलन के कार्यकर्त्ताओं व राज्य के बीच मूल्यों का संघर्ष इसमें शामिल ही है। दरअसल, गाँधीवादी अवधारणा सामाजिक संयोजन व सामंजस्य लाने का एक साधन है। यह अवधारणा सत्य के लिए एक तर्कसंबंधी अनुसंधान हेतु संवादों पर ज़ोर देती है। टी.एच. ग्रीन ने अपने 'लैक्चर्स ऑन द प्रिनसिपॅल्स ऑफ पॅलिटिकॅल ऑब्लिगेशन' में ठीक ही कहा है, "सरकार का काम है स्वतंत्रता की वे परिस्थितियाँ पैदा करना, जो नैतिक जीवन की शर्तें हैं। यदि वो इस काम की तामील करने नाकामयाब रहती है, तो वह हमारे आज्ञापालन पर से दावा खो देती है।" बार्कर के अनुसार, सविनय–अवज्ञा कार्यतः सामाजिक विचार–प्रक्रिया में ही निहित है; यह एक प्रत्यायन विधि है, न कि बल–प्रयोग का सहारा।

13.8 अभ्यास

1. विवाद–समाधान के पद्धति के रूप में सत्याग्रह के महत्त्व पर चर्चा करें।
2. सत्याग्रह क्या है? यह किस भाँति निष्क्रिय विरोध से भिन्न है?
3. समसामयिक विश्व में सत्याग्रह तथा सविनय–अवज्ञा की क्या प्रासंगिकता है?
4. सत्याग्रह के सिद्धांत और व्यवहार के संबंध में गाँधीजी का क्या योगदान है?
5. सत्याग्रह की गाँधीवादी संकल्पना के विभिन्न आयाम क्या हैं?